किताब में संकलित लेखों को पाँच भागों में विभाजित गया है – 'गीत-विवेचन', 'किरदार', 'किस्सागोई', 'फिल्में और अभिनेता' और 'विविध'। ज्ञात हो कि लेखक नवल ने इस किताब में संकलित लेख 'दैनिक नेशनल राजस्थान' के लिए लिखे थे जिसे पाठकों ने बहुत सराहा। पाठकों की ही प्रतिक्रिया रही कि इन लेखों को किसी किताब में संकलित किया जाना चाहिए जिसकी परिणति 'सिनेमागोई' के रूप में हुई है। हालांकि नवल की यह पहली प्रकाशित पुस्तक है लेकिन यतीन्द्र मिश्र जैसे स्थापित समीक्षक का इस किताब की भूमिका लिखना, इस किताब के लेखों की गुणवत्ता के बारे में बहुत कुछ कहता है। यतीन्द्र मिश्र लिखते हैं "हिंदी सिनेमा के परिसर में आवाजाही करने वाली नवल किशोर व्यास की किताब 'सिनेमागोई' एक ऐसा आत्मीय-पाठ है, जिससे गुजरकर हम सिनेमा के किरदारों, उनकी कहानियों और उन किस्सों के पीछे चलने वाली सुनहरी यादों के मुखातिब होते हैं। इस मुलाकात में पार्श्वसंगीत की तरह गीतों का विवेचन भी साथ-साथ रहगुजर बनता है, जो उसी तरह हमें अंतरतम तक पिरोता है, जिस तरह यह संगीत रुपहले पर्दे या रिकॉर्ड डिस्क पर बजते हुए आनंदित करता है।"

पहले खंड 'गीत-विवेचन' में सात लेख हैं और इन सभी लेखों को पढ़ने के बाद लगता है कि इस किताब में यदि सिर्फ यह एक लेख होता तब भी किताब को पढ़ना सार्थक होता। गीत, गीत के भाव और उसकी आत्मा की नवल को गहरी समझ है और यह इन सभी लेखों में दृष्टिगत होता है। लेखक की यह पहली किताब है और लगता है लेखक ने ठान लिया था कि यदि पाठक ने उनके किताब को पढ़ना शुरू किया तो वह उसे खत्म किये बिना जाने नहीं देंगे। यूं तो इस खंड के सभी लेख बेहतरीन हैं लेकिन पहला लेख 'कुछ न कहो : पंचम का विदा गीत' न सिर्फ इस खंड का बल्कि इस संग्रह का सर्वश्रेष्ठ लेख है। आर. डी. बर्मन को संगीत विरासत में मिली लेकिन उन्होंने अपने दम पर इसे एक नये मुकाम पर पहुंचाया। उन्हें पंचम की उपाधि दी गई। न जाने कितने ही अमर गीत उन्होंने श्रोताओं को दिये। बर्मन साहब का नाम शीर्ष के म्यूजिक डॉयरेक्टर्स में लिया जाता था और वे इसे डिजर्व भी करते थे। लेकिन फिर आया दौर उनके ढलान का। उनके बनाए गाने नहीं चले, राजनीति हुई और बर्मन साहब को काम मिलना बंद हो गया। यह उनके अवसाद का दौर था। कभी कुछ काम मिल भी गया तो अब उनमें वह पहले सी लगन नहीं रही थी। ऐसी परिस्थिति में कई बार आवश्यकता होती है एक ऐसे व्यक्ति कि जो या तो आपको आपकी शक्तियों की याद दिलाए या आपके आत्म-सम्मान पर चोट पहुंचाए। जामवंत ने जब हनुमान जी से कहा "पवन तनय बल पवन समाना, बुधि बिबेक बिग्यान निधाना /कवन सो काज कठिन जग माहीं, जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं।" तब उन्हें उनकी शक्तियों का स्मरण हुआ। बर्मन साहब के लिए यह काम किया विधु विनोद चोपड़ा ने जो '1942 – ए लव स्टोरी' का निर्देशन कर रहे थे। एक ऐसे समय में जब बर्मन साहब से संगीत लेने को कोई तैयार नहीं था, विधु विनोद चोपड़ा ने उन पर विश्वास जताया। अवसाद में डूबे बर्मन ने उन्हें एक ऐसे ही कोई धुन सुना दी। विधु विनोद चोपड़ा ने कहा "आप बेस्ट हो पर मैं आपमें उनको (एस.डी. बर्मन) को ढूंढ रहा हूं और आप ऐसा खराब काम करेंगे तो यह स्वीकार करने जैसा नहीं है।" एक कलाकार सब कुछ सह सकता है लेकिन अपने सम्मान पर आंच नहीं, लेकिन विधु विनोद चोपड़ा ने जानबूझ कर यह किया था। फणीश्वर नाथ रेणु की कहानी 'ठेस' इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है जहां सिरचन

सम्मान पर ठेस पहुंचते ही काम छोड़ कर चला जाता है लेकिन तब वह एक ऐसा चिक बनाता है जिसकी खूबसूरती देखते ही बनती है। बर्मन ने भी विधु विनोद चोपड़ा से सात दिन का समय लिया और फिर उन्होंने जो काम किया वह आज हम सब के सामने '1942 – ए लव स्टोरी' के संगीत के रूप में है। ज्ञात हो इस फ़िल्म की रिलीज बर्मन साहब देख नहीं पाए, इससे पहले उनका निधन हो गया। बर्मन साहब ने जितने गाने बनाए उनमें '1942 – ए लव स्टोरी' का संगीत सर्वश्रेष्ठ नहीं है लेकिन इन मायनों में महत्वपूर्ण है कि जिस संगीतकार को उपेक्षित किया गया उसने जाने से पहले एक ऐसा संगीत दिया जिसे हम कभी भूल नहीं पाएंगे। नवल लिखते हैं "चैंपियन को चैंपियन की तरह ही जाना था। उसे ये कम्पोजिशन एक महान विदा गीत की तरह दुनिया के नाम करनी थी। ऐसा महान विदा गीत कि उसके रचे सारे संगीत पर कोहिनूर सा चमके।" इस खंड के अन्य लेख जो 'तुम पुकार लो', मैं जानता हूं कि तू गैर है मगर यूं ही..', 'मुझे प्यार करने वाले, तू जहां है मैं वहां हूं', 'नैना बरसे रिमझिम रिमझिम', 'ये नयन डरे डरे' और 'पिया तोरा कैसा अभिमान' गानों के इर्द-गिर्द कहानी बुनते हैं, बहुत ही रोचक बन पड़े हैं और इनमें लेखक की लेखन-शैली वह प्रभाव डालने में सक्षम साबित होती है जहां इसे 'दास्तानगोई' के समकक्ष रखा जा सके।

दस लेखों से सजे खंड 'किरदार' में कई लेख हैं जिनमें समान विषयों पर बनी फ़िल्म या विषय-वस्तु के बीच तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है। 'क्वीन' और 'तनु वेड्स मनु' के बहाने स्त्री विमर्श, 'पद्मावत, गुलाल, अनुराग कश्यप और गुरुदत्त' शीर्षक के चारों विषय एक-दूसरे से इतने अलग कि कोई समानता नहीं दिखती लेकिन नवल ने एक बेहद रोचक लेख लिखा है। शॉर्ट फ़िल्म महरूनी और द ब्लू अंम्ब्रेला की चर्चा, जब वी मेट और इम्तियाज़ की चर्चा जैसे कई लेख हैं लेकिन जो तीन लेख इस खंड को खास बनाते हैं वह हैं – "सफल प्रेम की असफल परिणति : देवदास", "आनंद मरा नहीं, आनंद कभी मरता नहीं" और "अमृता प्रीतम :छत इमरोज तो साहिर आसमान"। देवदास में जहां प्रेम के दर्द का सजीव चित्रण है जो देवदास की मृत्यु से अपने अंत को पाता है तो वहीं आनंद, जीवन को आखिरी लम्हे तक बिना मृत्यु से डरे खुशी-खुशी जीने की प्रेरणा। अमृता इमरोज़ का प्रेम एक ऐसा प्रेम जिसे छत और आसमान दोनों मिले और शायद नहीं भी। तीनों ही लेख लंबे समय तक पाठक के मस्तिष्क में ताज़ा रहेंगे इसमें कोई शक नहीं।

फ़िल्मों और फ़िल्म से जुड़ी हस्तियों के बारे में जानने की जिज्ञासा भारत में आमतौर पर पायी जाती है। कई पत्रिकाएं हैं जिनका मूल विषय फ़िल्म ही हैं, कई किताबें प्रकाशित हुई हैं जिनमें फ़िल्म जगत से जुड़े लोगों के रोचक किस्से लोगों के सामने आए। आजकल इंटरनेट के माध्यम से भी कई सूचनाएं मिलती रहती हैं ऐसे में बीते समय की कोई नयी कहानी या रोचक जानकारी का सामने आना आसान नहीं है लेकिन 'किस्सागोई' खंड में लेखक ने चार लेख रखे हैं और चारों ही ऐसी जानकारी मुहैया करवाते हैं जो आमतौर पर उपलब्ध नहीं हैं। शम्मी कपूर को संगीत की कितनी समझ थी इस पर एक लेख 'जब शम्मी कपूर ने पंचम की चोरी पकड़ी' शीर्षक से है। लेखक ने लिखा है कि जब पंचम ने उन्हें 'दीवाना मुझ सा नहीं इस अंबर के नीचे' की धुन सुनाई थी तब शम्मी कपूर ने कहा था कि यह धुन नेपाली लोकगीत की है। यही नहीं शम्मी कपूर ने कुछ लोकप्रिय गीतों की धुन भी बनाई जिनमें 'नीला आसमां सो

गया' भी शामिल है। नसीरुद्दीन शाह और ओमपुरी की दोस्ती पर एक लेख 'रंगमंच-सिनेमा के जय-वीरू : नसीर-ओम' शीर्षक से है, जिसमें इन दोनों की दोस्ती की शुरुआत, इनके संघर्ष और इनके बीच पैदा हुई दूरी, सबका बड़ा ही रोचक वर्णन है। लेखक लिखते हैं "ओम पुरी के अंतिम दिनों में उनके नसीर के साथ खटास को बयानबाजी में बार-बार देखा गया पर नसीर ने ताउम्र अपने मिजाज के उलट इस पर चुप्पी साधी। नसीर बेबाक है। अमिताभ से लेकर शाहरुख तक हर किसी के ऊपर बोला, पर ओम पुरी पर उनकी चुप्पी को समझा जा सकता है।" जाने भी दो यारों अपने समय की एक ऐसी फ़िल्म रही जिसे बहुत ही कम बजट में कलाकारों ने बनाया था। उस समय यदि फ़िल्म तीन घंटे से ज्यादा की होती थी, तब टैक्स ज्यादा देना पड़ता था। फ़िल्म में अनुपम खेर का बड़ा ही जबरदस्त किरदार था जिसे ले कर दूसरे कलाकारों में थोड़ी जलन की भावना भी थी। यह फ़िल्म तीन घंटे से ज्यादा की बन गई और इसे छोटा करने के लिए अनुपम खेर वाला किरदार फ़िल्म से निकाल दिया गया। भला हो फ़िल्म 'सारांश' का जिसकी वजह से अनुपम ने अपनी जगह बनाई। अनुपम भी 'जाने भी दो यारों' के हिस्सा थे यह जानकारी निःसंदेह नयी है। किशोर कुमार के बारे में बहुत कुछ कहा और लिखा गया है। कई किताबें आईं, पंचम और अमित कुमार ने किशोर कुमार से जुड़े कई संस्मरण साझा किए हैं। फिर भी लेखक ने 'मनमौजी किशोर' शीर्षक से एक लेख लिखा है जिसमें कुछ पुरानी और कुछ नयी जानकारी बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत की गई है। 'सिनेमागोई' या नवल की विशेषता यह नहीं कि पाठकों को नयी जानकारी मिलती है। विशेषता है इन किस्सों या घटनाओं का प्रस्तुतीकरण, जिसमें इतनी रोचकता और नाटकीयता है कि 'सिनेमागोई' नाम की सार्थकता पर कोई प्रश्न चिन्ह नहीं रह जाता।

'फ़िल्में और अभिनेता' खंड में दस लेख संकलित हैं और इन लेखों का फलक इस खंड के शीर्षक से कहीं ज्यादा विस्तृत है। 'संजू' फिल्म के बहाने लेखक संजय दत्त, सुनील दत्त, परेश रावल, रणबीर कपूर, विकी कौशल, राजू हिरानी इन सबके साथ इस फ़िल्म के कई भावनात्मक पहलुओं की भी बात करते हैं। नवल लिखते हैं "संजू देखकर आया तो पक्का मुझे न संजय दत्त याद था न रणबीर कपूर। याद रहा एक गंभीर जिम्मेदार बाप और एक हद दर्जे का प्यारा दोस्त कमलेश। फ़िल्म के ये दो पक्ष ही सबल हैं। इन्हें हटा लो, आपकी संजू भरभराकर गिर जाएगी हिरानी साहब।" दिलीप कुमार, नसीरुद्दीन शाह के नाम भी लेख हैं। "मैं अपना फेवरेट हूं : नसीरुद्दीन" शीर्षक से लेख में नसीर साहब के बारे में नवल लिखते हैं "नसीर अभिनय के प्रतिमान हैं। आदर्श के मानक। इससे ऊपर कुछ भी नहीं। अपने खुरदरे चेहरे, गहराई तक दिल में उतर जानेवाली आंखों और चेहरे पर सफ़ेद घुंघराली दाढ़ी के साथ अंग्रेजी, हिंदी और उर्दू तीनों ही भाषाओं को जब नसीर की आवाज़ और डिक्शन मिलता है तो जो साउंड सुनने के लिए कानों तक पहुंचता है, वह मदहोश कर देने को काफ़ी है। मारक है इसका असर। इससे बचना आसान नहीं। वो हाजिर जबाव है, मसखरा भी और गुस्सैल भी। संतुष्ट भी, बेचैन भी।" फ़िल्म के बहाने धोनी के चरित्र की बात लेखक 'महेंद्र सिंह धोनी जैसा निर्मोही होना मुश्किल' शीर्षक से लिखे लेख में करते हैं। लेख धोनी के वनडे और टी-20 क्रिकेट से सन्यास लेने से पहले का है जिसमें नवल लिखते हैं "धोनी चुपचाप टेस्ट मैच से सन्यास की घोषणा कर देते हैं। बगैर किसी धूम-धड़ाके और शोर के। लगता है कि किसी दिन अचानक ही चुपके से बगैर किसी स्क्रिप्ट को

रचे वनडे और टी-20 को भी बाय-बाय बोल देंगे। उसे हिरोपंथी आती ही नहीं है। उसे परदे के पीछे रहना आता है। उसकी संतुष्टि का दायरा बहुत विशाल और गहरा है। ये संतुष्टि हर तमगे और वाहवाही से दूर है।" खंड के सभी लेख रोचक हैं, पठनीय हैं और कम शब्दों में बड़ी कहानी कहने में सक्षम।

किताब का आखिरी खंड 'विविध' है और जैसा कि नाम से स्पष्ट है, जो लेख पहले के चार खंड में समाहित न हो सके, उन्हें यहां संकलित किया गया है। लेकिन इस विविधता से यह खंड बड़ा मज़ेदार बन पड़ा है जहां हर लेख एक दूसरे से अलग और हर लेख की अपनी एक अलग मिठास है। कई जगह यह विविधता एक लेख के अंदर भी देखने को मिलती है। 'भंसाली का संगीत नौशाद की याद दिलाता है' शीर्षक से लिखे लेख में पहले तो लेखक भंसाली और रहमान के संगीत की तुलना करते हैं। फिर भंसाली की इस बात पर तारीफ़ करते हैं कि विधिवत संगीत की शिक्षा न रहते हुए भी भंसाली ने जिन गीतों को संगीतबद्ध किया वे सभी शास्त्रीय धुनों पर आधारित थे। लेख के शीर्षक से संबंधित बात लेखक ने सिर्फ़ यह लिखी कि भंसाली अपने संगीत से नौशाद साहब की याद दिलाते हैं और यदि नौशाद जिंदा होते तो जरूर भंसाली की तारीफ़ करते। लेखक फ़िर नौशाद साहब द्वारा अपने से जूनियर मदन मोहन की तारीफ़ का किस्सा सुनाते हैं। नौशाद की ही एक और फ़िल्म बैजू बावरा का भी किस्सा लिखा है जहां बड़ी मिन्नत से तानसेन की गायकी को आवाज़ देने के लिए तब के मशहूर और शास्त्रीय गायक उस्ताद अमीर खान साहब को मनाया गया। समस्या यह थी कि फ़िल्म में तानसेन को बैजू बावरा से हारना था, ऐसे में वह कौन सी आवाज़ हो जिसे उस्ताद अमीर खान साहब के मुकाबिल लिया जाय और कौन जा कर उस्ताद अमीर खान साहब से कहे कि आपको हारना है। लेकिन उस्ताद अमीर खान साहब ने परिस्थिति को समझ खुद ही अपने से जूनियर, पंडित डी. वी. पलुस्कर का नाम सुझाया। यह लेख अपने शीर्षक के साथ शायद न्याय न करता हो लेकिन किस तरह पहले के लोगों ने कला का सम्मान किया भले ही कलाकार खुद से छोटा क्यों न हो, को भली-भांति प्रतिपादित करता है।

'बॉलीवुड गानों में साहित्य का छौंक' शीर्षक से लेखक साहिर, गुलज़ार, शैलेन्द्र, नीरज, जावेद अख्तर, प्रसून जोशी और अन्य कई गीतकारों का उल्लेख करते हैं जिन्होंने गानों को शब्दों की तुकबंदी न मान कर अपनी साहित्यिक समझ और रुचि से ऐसा सजाया कि गाने कालजयी बन गये। इस विषय, जिस पर एक पूरी किताब लिखी जा सकती है, यह छोटा लेख खटकता है; लेकिन लेख एक दैनिक के लिए लिखे गए थे, ऐसे में शब्द-सीमा का पालन लेखक की मजबूरी थी। 'बाहुबली के बहाने देशजता संसार' शीर्षक से लेख में लेखक ने अपने देश की कहानियों पर ही फ़िल्म बनाने में अपार संभावनाओं का उल्लेख किया है। विदेशी फ़िल्मों की नकल और पुराने फ़िल्मों के रीमेक के दौर में बाहुबली फिल्म ने दिखा दिया है कि दर्शक अपने देशज कहानियों को कितना पसंद करते हैं। लेखक के अनुसार बाहुबली, हमारे दादी-नानी द्वारा सुनी गई कहानियों का ही 'लार्जर दैन लाइफ़' प्रस्तुतीकरण है।

'खिलाड़ियों पर बॉयोपिक' शीर्षक में आजकल खेल जगत की हस्तियों पर फ़िल्मों के चलन की बात की गई है जिनमें सायना नेहवाल, कपिल देव, मिल्खा सिंह, पानसिंह तोमर, सचिन, धोनी आदि पर बने फ़िल्मों का ज़िक्र हुआ है। लेख

में लेखक ने 'भाग मिल्खा भाग' फ़िल्म में फरहान अख्तर द्वारा निभाए किरदार की चर्चा करते हुए इसकी तुलना इरफ़ान द्वारा निभाए गए 'पानसिंह तोमर' के किरदार के साथ की है। लेख में लेखक ने इस बात की भी चर्चा की है कि मिल्खा सिंह ने अपने बेटे को दौड़ने की बजाय धनकुबेरों के खेल गोल्फ के लिए प्रोत्साहित किया जबकि व्यक्तिगत जीवन के कटु संबंधों के बावजूद पानसिंह तोमर के बेटे फ़ौज का हिस्सा बने। लेखक लिखते हैं "राष्ट्रीय चरित्रों के व्यक्तिगत निर्णयों की सामाजिक समीक्षा लाजिम है।" छोटे पर्दे पर जिस तरह के कार्यक्रम आजकल परोसे जा रहे हैं उसपर चिंता जताते हुए लेखक ने कुछ दशक पहले के चर्चित धारावाहिकों की चर्चा की है। "बुद्धू बक्सा बन चुका है छोटा पर्दा" शीर्षक से लेख में नवल सवाल उठाते हैं कि यदि लोग आज के कार्यक्रमों की निंदा कर रहे हैं तो कमबख्त टीआरपी कहां से निकल आ रही है। वरुण धवन, रहमान, अनु मलिक, अनुराग बसु, खय्याम आदि पर व्यक्तिपरक रोचक लेख हैं जो इस खंड मे हैं। 'सपने बेचने का ही माध्यम नहीं सिनेमा' शीर्षक से लेख में सिनेमा की जिम्मेदारियों की बात करते हुए लिखा है "फ़िल्म समाज से लेने और देने का माध्यम है पर सिनेमा समाज से मात्र ग्रहण ही कर रहा है तो प्रश्न यह है कि वापस समाज को लौटा क्या रहा है?" एंथोनी गोंसाल्वेस जो गोवा के प्रसिद्ध म्यूजिक अरेंजर थे, जिन्होंने आर.डी. बर्मन और प्यारेलाल जैसों को वायलिन बजाना सिखाया और जिनको ट्रिब्यूट देते हुए प्यारेलाल ने गाना बनाया 'माई नेम इज एंथोनी गोंसाल्वेस', को याद करते हुए नवल आज के दौर में म्यूजिक अरेंजर्स की उपेक्षा की बात करते हैं। 'गुमनामी का दंश झेलते म्यूजिक अरेंजर्स' शीर्षक से उनके सुनहरे दिनों को कई रोचक प्रसंगों के माध्यम से याद करते हुए वर्तमान के तकनीक युग में उनकी उपेक्षा और गुमनामी का प्रश्न उठाया गया है। 'स्मृतियों में से खुद का यूं गायब हो जाना' शीर्षक से लेख में फ़िल्म सदमा में कमल हासन के अभिनय की चर्चा है जिसने इस फ़िल्म को यादगार बना दिया। नवल लिखते हैं 'सदमा के क्लाइमैक्स के अलावा कमल हासन पूरी फ़िल्म में बेहद संयमित हैं और क्लाइमैक्स में अपने पूरे हुनर के साथ उपस्थित हैं।" इस खंड में चौदह लेख हैं और सभी एक-दूसरे से अलग होते हुए भी सिनेमा के रोचक किस्सों के माध्यम से पाठकों को बांधे रखते हैं।

यदि आप फ़िल्मों के शौकीन हैं तो आपको 'सिनेमागोई' अवश्य पढ़नी चाहिए। इन लेखों को पढ़ते हुए आप कई ऐसे किस्सों, भाव, घटनाएं, व्यक्तित्व आदि से परिचित होंगे जिसे शायद पहले आपने उस रूप में न देखा हो या न जाना हो। यदि आप सिनेमा के शौकीन नहीं हैं तब भी आपको यह किताब अवश्य पढ़नी चाहिए क्योंकि यह किताब आपको सिखलाती है कि कई बार छोटी-छोटी बातों या संदर्भों के बड़े मायने होते हैं। किताब में वर्णित घटनाओं या किस्सों को पढ़ते हुए पाठक के ज़ेहन में घटनाएं किसी फ़िल्म की तरह आकार ले लेती हैं जिनमें पाठक इस तरह खो जाता है कि लेखक नवल कब हाथ छुड़ा कर आपको इन किरदारों के साथ छोड़ जाते हैं, पता नहीं चलता; और यही लेखक की सबसे बड़ी विशेषता और सफलता है। यतीन्द्र मिश्र ने ठीक ही लिखा है "छोटे-छोटे अध्यायों से बड़े अर्थ पैदा करती हुई यह किताब न सिर्फ़ पठनीय बन पड़ी है, बल्कि अपने अनूठे ढंग की मीमांसा, बयान की संक्षिप्ति, भाषा के सहज, सरल प्रयोग और आधुनिक दृष्टि से विचार करने के चलते समकालीन संदर्भों में महत्वपूर्ण भी बन

गई है। यह किताब सिनेमा प्रेमियों के लिए ही नहीं, बल्कि हर उस भाषा और संस्कृति प्रेमी के लिए एक ज़रूरी दस्तावेज़ है, जो सिनेमा को समाज का एक बड़ा प्रतिबिंब मानते हैं।"

पुस्तक शीर्षक : सिनेमागोई
लेखक : नवल किशोर व्यास
प्रकाशक : सर्जना प्रकाशन, बीकानेर
पृष्ठ संख्या : 144
प्रकाशन वर्ष : 2020
आईएसबीएन नंबर : 978-8194459026
मूल्य : 120/- रुपये

समीक्षक : प्रवीण प्रणव
डायरेक्टर, प्रोग्राम मैनेजमेंट, माइक्रोसॉफ्ट
ईमेल : Praveen.pranav@gmail.com
फ़ोन : 9908855506